SAMVAD E - JOURNAL
ISSN (Online) :2583-8334
(International Peer-Reviewed Refereed Journal)
Volume 4, Issue-1, January to March : 2026
Published by Rangmati Publication http://www.rangmatipublication.com/

कबीर की निर्गुण भक्ति

डॉ. रिन्कु ए. वाढेर
सहायक प्राध्यापक– हिन्दी विभाग
भक्तराज दादा खाचर कला और वाणिज्य महाविद्यालय, गढ़डा (स्वा.)

सारांश :

कबीरदास मध्यकालीन भारत के एक प्रमुख संत-कवि थे, जिन्होंने भक्ति आंदोलन को नई दिशा प्रदान की। वे निर्गुण भक्ति धारा के प्रमुख प्रतिनिधि माने जाते हैं, जहाँ ईश्वर को निराकार, निर्गुण और सर्वव्यापी रूप में देखा जाता है। निर्गुण भक्ति का अर्थ है ऐसी भक्ति जो ईश्वर के किसी रूप, गुण या आकार से बंधी नहीं होती, बल्कि आत्मा की आंतरिक शुद्धता और प्रेम पर आधारित होती है। कबीर की भक्ति में रूढ़िवादिता, जाति-धर्म के भेदभाव और बाहरी कर्मकांडों का विरोध प्रमुख है। वे कहते थे कि सच्ची भक्ति हृदय से निकलती है, न कि मंदिर-मस्जिद या पूजा-अर्चना से। कबीर की निर्गुण भक्ति न केवल धार्मिक थी, बल्कि सामाजिक सुधार की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण थी, क्योंकि इसमें मानवता की एकता और समानता पर जोर दिया गया।

बीजशब्द : कबीर, निर्गुण, भक्ति, धर्म, सम्प्रदाय.

कबीर का जन्म 1398 ई. में काशी (वाराणसी) में हुआ माना जाता है, हालांकि इसकी सटीक तिथि विवादास्पद है। किंवदंती है कि नीरू जुलाहा और उसकी पत्नी नीमा ने बालक के रूप में विद्यमान सत्पुरुष को अपने घर ला कर पालन-पोषण किया। इस प्रकार जुलाहा परिवार में परिपालित सत्पुरुष ने युग के शोषण और बन्धनों को शिथिल करके सामाजिक जीवन का एक नया परिच्छेद उद्घाटित किया। जनश्रुतियों में प्रसिध्द है कि कबीर की पत्नी का नाम लोई था। उनकी संतान के रूप में पुत्र कमाल और पुत्री कमाली का उल्लेख मिलता है।"[1] इस प्रकार वे एक जुलाहे परिवार में पले-बड़े और स्वामी रामानंद के शिष्य बने। उनके जीवन में हिंदू और इस्लाम दोनों का प्रभाव दिखता है, लेकिन वे किसी भी संप्रदाय से बंधे नहीं थे। कबीर की रचनाएँ मुख्य रूप से 'बीजक', 'साखी' और 'रमैनी' में संकलित हैं, जो निर्गुण भक्ति की गहराई को दर्शाती हैं।'अक्षर ब्रह्म के परम साधक कबीरदास सामान्य अक्षरज्ञान से रहित थे। उन्होंने बड़े स्पष्ट शब्दों में कहा : "मसि कागद छुयौ नहीं, कलम गह्यौ नहीं हाथ।" अतः यह बात निर्विवाद है किउन्होंने स्वतः किसी ग्रन्थ को लिपिबद्ध नहीं किया."[2] उनकी भक्ति सहज, सरल और लोकभाषा में व्यक्त हुई, जो आम जनमानस तक पहुँची। निर्गुण भक्ति की यह धारा भक्ति काल (14वीं-17वीं शताब्दी) में प्रमुख थी, जिसमें कबीर के अलावा रैदास, नानक और दादू जैसे संत भी शामिल थे।

भक्ति आंदोलन की शुरुआत दक्षिण भारत से होकर उत्तर भारत में फैली. इसकी दो प्रमुख शाखाओंसगुण और निर्गुणमें से एक है। सगुण भक्ति में ईश्वर को राम, कृष्ण जैसे साकार रूप में पूजा जाता है, जबकि निर्गुण में ईश्वर निराकार, असीम और गुणों से परे होता है। कबीर की निर्गुण भक्ति में ईश्वर को 'राम' कहा जाता है, लेकिन

यह राम अयोध्या वाले राम नहीं, बल्कि निराकार ब्रह्म है। वे कहते हैं कि ईश्वर सबमें व्याप्त है, उसे बाहरी पूजा से नहीं, आंतरिक प्रेम से पाया जा सकता है। यह भक्ति प्रेमाभक्ति का रूप लेती है, जहाँ भक्त और भगवान के बीच का संबंध प्रेमी-प्रेमिका या गुरु-शिष्य जैसा होता है। ज्ञान और भक्ति के समन्वय की निर्गुण भक्ति की जड़ें उपनिषदों और अद्वैत वेदांत में हैं, जहां ब्रह्म को निराकार और अखंड माना जाता है। कबीर ने इस दर्शन को लोकभाषा में प्रस्तुत किया, जिससे आम जनता तक पहुंच संभव हुई। जहां बाहरी कर्मकांडों का कोई स्थान नहीं था। कबीर ने निर्गुण भक्ति को ज्ञान और अनुभव के माध्यम से प्राप्त करने पर जोर दिया, जहां माया को भ्रम माना गया। वे कहते थे कि माया संसार की अभिव्यक्ति है, और इससे मुक्ति स्वयं की खोज से संभव है।निर्गुण भक्ति में भेदभाव का कोई स्थान नहीं; यह सभी को समान मानती है, चाहे वे किसी भी जाति या धर्म के हो।

उनकी भक्ति में माया की ठगिनी वाली छवि प्रमुख है। माया जीव को भटकाती है, लेकिन सच्ची भक्ति से मुक्ति मिलती है। कबीर की भक्ति समर्पण पर आधारित है, जहां अहंकार का त्याग जरूरी है। वे ईश्वर को गुरु के रूप में देखते थे, जो आंतरिक प्रकाश प्रदान करता है। उनकी निर्गुण भक्ति में हठयोग, नाथपंथ और सूफी मत का प्रभाव भी दिखता है, जहां प्रेम और एकत्व पर जोर है।कबीर ने धार्मिक रूढ़ियों का विरोध किया। वे मंदिर-मस्जिद, तीर्थयात्रा और व्रत-उपवास को व्यर्थ बताते थे। उनकी भक्ति लोक-जीवन से जुड़ी थी, जहां वे जुलाहे के रूपक से ईश्वर की खोज बताते थे।उनकी दृष्टि में अहंकार, माया और बाहरी दिखावा भक्ति के बाधक हैं। कबीर ने कहा कि 'सहज' ही सच्ची भक्ति है, जहाँ आत्मा ब्रह्म में विलीन हो जाती है। यह अवधारणा अद्वैतवाद से प्रेरित है, लेकिन कबीर ने इसे लोकजीवन से जोड़ा। कबीर की निर्गुण भक्ति सामाजिक समानता की बात करती है, क्योंकि निराकार ईश्वर सबमें समान रूप से निवास करता है, चाहे वह हिंदू हो या मुसलमान।कबीर का जीवन रहस्यमय रहा। वे अनपढ़ थे, लेकिन उनकी वाणी में गहन ज्ञान था। कबीर भावना की अनुभूति से युक्त, उत्कृष्ट रहस्यवादी, जीवन का संवेदनशील संस्पर्श करने वाले और मर्यादा के रक्षक कवि थे। उन्होंने स्वतः कहा है : "तुम जिन जानो गीत है, यह निज ब्रहम विचार।" पथभ्रष्ट समाज को उचित मार्ग पर लाना ही उनका प्रधान लक्ष्य है।"[3]कबीर ने हिंदू-मुस्लिम दोनों के रूढ़िवाद का विरोध किया, जिससे उन्हें दोनों पक्षों से विरोध झेलना पड़ा। सिकंदर लोदी ने उन्हें प्रताड़ित किया, लेकिन निर्गुण निराकार की भक्ति में लीन मस्तमौला कबीर हमेशा अडिग रहे।उनकी भक्ति पृष्ठभूमि में मध्यकालीन भारत की सामाजिक-धार्मिक अराजकता थी। मुस्लिम आक्रमणों, जातिवाद और पाखंड ने समाज को बाँट रखा था। कबीर ने निर्गुण भक्ति के माध्यम से एकता का संदेश दिया।

कबीर की निर्गुण भक्ति की मुख्य विशेषता है प्रेम और समर्पण। वे ईश्वर को प्रेमी के रूप में देखते हैं, जहाँ भक्त की विरह-व्यथा प्रमुख है। उनकी भक्ति में प्रपत्ति भाव है, अर्थात् पूर्ण समर्पण। वे कहते हैं कि शरीर ही मंदिर है, जिसमें ईश्वर निवास करता है। बाहरी पूजा व्यर्थ है; सच्ची भक्ति आंतरिक है।उनकी भक्ति की दूसरी विशेषता है सामाजिक समीक्षा। कबीर ने जाति-व्यवस्था, पंडित-मुल्लाओं के पाखंड और स्त्री और शूद्रों के शोषण का खुलकर विरोध किया। उनकी भक्ति में मानवता की एकता है, जो निर्गुण ईश्वर की सर्वव्यापकता से निकलती है। उनकी भक्ति की तीसरी विशेषता है सहजता। कबीर की भक्ति बिना नियमों के है, उसमें न व्रतहै,न तीर्थऔर न माला-जप। वे कहते हैं कि ईश्वर सहज में मिलता है।उनकी भक्ति की चौथी विशेषता है ज्ञान और भक्ति का समन्वय। हालांकि निर्गुण भक्ति ज्ञानमार्गी है, कबीर ने इसमें प्रेम जोड़ा। वे ब्रह्म को ज्ञान का नहीं, भक्ति का विषय मानते हैं।उनके दोहों में निर्गुण भक्तिका स्वरूप देखने को मिलता है। कबीर के दोहे निर्गुण भक्ति के जीवंत उदाहरण हैं।

'गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूं पाय।
बलिहारी गुरु आपने, गोविंद दियो बताय।।'

यहाँ कबीर गुरु की महिमा गाते हैं, जो निर्गुण ईश्वर तक पहुँचाते हैं। गुरु निराकार ब्रह्म का माध्यम है।

'कस्तूरी कुंडल बसै, मृग ढूंढै वन माहि।

ऐसे घट-घट राम हैं, दुनिया देखै नाहि।।'
यह निर्गुण ईश्वर की आंतरिकता दर्शाता है।ईश्वर कहीं बाहर नहीं, वह मनुष्य के भीतर घट में ही बसते है।
'माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर।
कर का मनका डार दे, मन का मनका फेर।।'
कबीर बाहरी कर्मकांडों का विरोध करतेहैं, और निर्गुण भक्ति की आंतरिकता पर ज़ोर देतेहैं।
'कबीरा सोई पीर है, जो जाने पर पीर।
जो पर पीर न जानई, सो काफिर बेपीर।।'
यह दोहा प्रेम और करुणा की निर्गुण भक्ति को दर्शाता है।
इन दोहों में कबीर की भाषा सरल है, लेकिन अर्थ गहन।वे निर्गुण ईश्वर को प्रेम से जोड़ते हैं।

इस प्रकार कबीर की निर्गुण भक्ति में क्रान्तिकारी और शाश्वत दर्शन है, जो बाहरी बन्धनों से मुक्त होकर ईश्वर की खोज को आंतरिक बनाती है।कबीर की निर्गुण भक्ति एक ऐसी आध्यात्मिक विचारधारा है, जो न केवल धार्मिक, बल्कि सामाजिक और नैतिक सुधारों का भी आधार बनी।उनकी रचनाएँ सरल भाषा में गहन दार्शनिक विचारों को प्रस्तुत करती हैं, जो सामान्य जन से लेकर विद्वानों तक को प्रभावित करती हैं।कबीर ने अपनी निर्गुण भक्ति के माध्यम से यह सिद्ध किया कि सच्ची भक्ति बाहरी कर्मकांडों या धार्मिक प्रतीकों में नहीं, बल्कि हृदय की शुद्धता, प्रेम और सत्य में निहित है।उनके दोहें आज भी हमें सामाजिक समानता, धार्मिक सहिष्णुता और आत्म-जागरूकता की प्रेरणा देती हैं।कबीर की निर्गुण भक्ति न केवल एक आध्यात्मिक मार्ग है, बल्कि एक जीवन दर्शन है, जो मानवता को एक बेहतर और अधिक समावेशी समाज की ओर ले जाता है।यह भक्ति न केवल धार्मिक, बल्कि सामाजिक और मानवीय मूल्यों की रक्षा करती है।उनकी वाणी आज भी प्रासंगिक है, जो हमें पाखंड से दूर रहने और सच्ची भक्ति अपनाने की प्रेरणा देती है।कबीर ने सिद्ध किया कि भक्ति सहज है और ईश्वर सब में समान रूप से व्याप्त हैं. भक्ति धर्म की सीमाओं से परे हैऔर यह मानवता का मार्ग है।उनकी निर्गुण भक्ति हमें एक बेहतर समाज की ओर ले जाती हैं।उनका समानता का भाव उनके दोहों के माध्यम से आज भी समाज के लिए मार्गदर्शक की भूमिका निभा रहाहैं।अपनी निर्गुण भक्ति के माध्यम से कबीर ने मानवता को एक सूत्र में बाँधने का सफल प्रयास किया है।कबीर की निर्गुण भक्ति आज भी उतनी ही प्रासंगिक है, जितनी मध्यकाल में थी।आधुनिक समाज में धार्मिक कट्टरता, सामाजिक असमानता और अंधविश्वासों की समस्या अभी भी विद्यमान है।कबीर का दर्शन इन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करता है।

संदर्भ सूची :

- हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल, प्रकाशक – मयूर बुक्स, पृष्ठ – 119+120
- हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल, प्रकाशक – मयूर बुक्स, पृष्ठ –120
- हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल, प्रकाशक – मयूर बुक्स, पृष्ठ –120